विस्तार पत्रक–NRCC/2017-1

ऊँटों में तिबरसा / सर्रा रोग : फैलाव और नियंत्रण

संजय कुमार, एस.के. घोरूई एवं एन.वी. पाटिल

ऊँटों में सर्रा / ट्रीपैनोसोमीऐसिस रोग सबसे हानिकारक बीमारी है जो उष्ट्र स्वास्थ्य पर गहरा प्रभाव डालती है और इसकी वजह से ऊँट पालकों को भारी आर्थिक नुकसान होता है। ऊँटों में इस बीमारी का प्रभाव लंबी अवधि (तीन वर्ष या इससे ज्यादा) तक होने के कारण इसका नाम तिबरसा रोग दिया गया है। ऊँटों में यह रोग खून में पाये जाने वाले ट्रीपैनोसोमा इवान्सी नामक रक्त प्रोटोजोया की वजह से होता है। सर्रा रोग अफ्रीका, अरब और एशिया के ऊटों में उच्च रुग्णता और मृत्यु दर का प्रमुख कारण है। इस रोग का सबसे हनिकारक प्रभाव क्रोनिक (पुरानी) ट्रीपैनोसोमीऐसिस से होता है जिसकी पहचान गर्भपात, बांझपन, कम दूध उत्पादन, वजन कम होना, दुर्बलता में वृद्धि और जानवरों में काम करने की क्षमता और उत्पादकता में कमी के रूप में परिलक्षित होता है।

राजस्थान के शुष्क क्षेत्रों में उष्ट्र स्वास्थ्य की विभिन्न बाधाएँ अच्छी तरह से ज्ञात है तथा ऊँट की सबसे विनाशकारी परजीवी रोगों में 'ट्रीपैनोसोमीअसिस / तिबरसा'

समय से सूचीबद्ध किया हुआ है। जलवायु परिवर्तन इस रोग के फैलाव में सहायक होता है तथा रोग के अनजान मेजबानों (होस्ट्स) को एक साथ करने में और उनके रोगजनकों को एक से दूसरे होस्ट्स पर आने–जाने में सहायक होता है। जलवायु परिवर्तन रोग के नियंत्रण या बचाव के उपायों जिसे हम रोग को दूर रखने हेतु उपयोग करते हैं, को लागू करने में हमें बाधा पहुंचाती है। राजस्थान के शुष्क क्षेत्र में, जलवायु परिवर्तन पहले से ही कई वर्षों से देखा जा रहा है और यह वर्षा के पैटर्न/स्वरूप में परिवर्तन के साथ बारिश की लम्बी समयावधि से परिलक्षित होता है। ऊँट के स्वास्थ्य पर जलवायु परिवर्तन के अप्रत्यक्ष प्रभाव के एक परिणाम के रूप में रोगाणुओं को विकसित करने, परजीवी या वैक्टर के वंश को बढ़ाने के लिए अधिक अनुकूल परिस्थितियाँ जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। यह रक्त प्रोटोजोआ, खून चूसने वाली विभिन्न प्रकार की मक्खियों के माध्यम से यंत्रवत् फैलता है। बीमारी के मामले और तीव्रता विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में भिन्न होते हैं और ज्यादातर मक्खियों के प्रजनन की अवधि के दौरान विशेष रूप से अक्टूबर और नवंबर के महीने में होते हैं। लेकिन समय के साथ हो रहे जलवायु परिवर्तन के कारण इस रोग के छिटपुट मामले सालोंभर दिखाई पड़ते हैं। राजस्थान के शुष्क क्षेत्र में वर्षा के स्वरूप में परिवर्तन के कारण ट्रिपैनोसोमा इवान्सी के वैक्टर की जनसंख्या बढ़ रही हैं और क्षेत्र के ऊँट सालों भर

ट्रिपैनोसोमियासिस रोग से ग्रसित हो सकते हैं। राज्य के अर्द्ध शुष्क क्षेत्र में इंदिरा गांधी नहर की उपस्थिति के कारण भू–जलवायु परिस्थितियाँ बदल गयी है और सर्रा रोग के मामले इस नहर के आस–पास के क्षेत्रों में कई गुना बढ़ गये हैं। अतः राजस्थान के शुष्क और अर्द्ध शुष्क क्षेत्रों में हो रहे जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप विनाशकारी परजीवी रोगों के दुष्प्रभाव से ऊटों को बचाने के लिए इन परजीवी रोगों की रोकथाम तथा उष्ट्र–प्रबंधन पर उचित ध्यान देने की आवश्यकता है जिससे उष्ट्र पालकों को होने वाले भारी आर्थिक नुकसान से बचाया जा सके।

रोग–संचरण / बीमारी का फैलाव

ऊँटों के खून में पाये जाने वाले ट्रीपैनोसोमा इवान्सी प्रोटोजोया एक जानवर से दूसरे जानवर में पशुओं को काटने वाली मक्खी की विभिन्न प्रजातियों से फैलता है। मक्खियों की विभिन्न जातियों जैसे टेबनस, स्टोमोक्सीस, लायप्रोसिया, क्राईसोप्स, हीमेटोपोटा और हीप्पोबोसका आदि तिबरसा रोग को यंत्रवत् (मेकेनीकली) फैलाते हैं। ये मक्खियाँ संक्रमित जानवरों को काटने के बाद एक निश्चित समयवधि तक ही दूसरे जानवर को काटकर उसमें बीमारी के प्रोटोजोया को संचारित कर सकते हैं। इन मक्खियों की गतिविधि गीले मौसम के दौरान बहुत ज्यादा होती है और यह परजीवी के प्रसार में सहायक होता है। सर्रा रोग फैलाने वाली मक्खियों की संख्या और इनकी गतिविधि

बरसात के मौसम के दौरान और बाद में अधिक होती है जिससे इस समयावधि में बीमारी का प्रकोप बढ़ जाता है हालांकि इस रोग के छिटपुट मामले पूरे साल भर मिलते हैं।

रोग की चिकित्सीय अभिव्यक्तियाँ

संक्रमित ऊँटों में, इस बीमारी के प्रारंभिक चरण में कोई उल्लेखनीय लक्षण नहीं दिखता है। हालांकि, जानवरों के परिधीय रक्त में परजीवी की उपस्थिति से होने वाले नुकसान के कारण बुखार, कमजोरी और दुबलापन धीरे – धीरे स्पष्ट रूप से बढ़ते जाते हैं और जानवर की स्थिति खराब होती जाती है। ऊँटों में यह रोग काफी लंबी अवधि (तीन से चार वर्षों) तक रह सकता है और दुर्बलता बढ़ने के कारण अंततः पशु की मौत हो जाती है। यह रोग आत्म सीमित चरित्र का होता है जिससे इसका आगे सीमित संक्रमण होता है। पशुओं के आराम देने, अच्छी तरह से खिलाने – पिलाने और अच्छा प्रबंधन से बीमारी से होने वाली हानि में 20 प्रतिशत तक कमी हो सकती है लेकिन पशु संक्रमण के वाहक बने रहते हैं। बीमारी के उन्नत चरण में संक्रमित ऊँट के शरीर के निचले भागों में सूजन होता है, बाल गिर जाते हैं, त्वचा के नीचे वसा में कमी हो जाती है और कूबड़ लापता होने लगता है। सभी विकसित मांसपेशी अपक्षय से पीड़ित (एट्रोफाइड) हो जाता है। रक्त में पेरासाइटिमिया की वृद्धि के कारण पशुओं में ग्लूकोज की

कमी हो जाती है जिससे बेचैनी के लक्षण दिखते हैं जो रेबीज, सांप के काटने या लेप्टोस्पायरोसिस के लक्षण के सदृश होता है। संक्रमण की इस स्थिति में रोग का निदान शायद ही अनुकूल होता है और अंततः पशु की मौत हो जाती है।

रोगजनन / रोगोत्पत्ति

रोगजनन विभिन्न तरीकों से हो सकता है जैसे (1) खून में ग्लूकोज के स्तर में अत्यधिक कमी से: खून में उपस्थित ट्रीपैनोसोमा इवान्सी प्रोटोजोया रक्त शर्करा की बड़ी मात्रा का सेवन करता है जिसके परिणामस्वरूप खून में ग्लूकोज के स्तर में अत्यधिक कमी हो जाती है और लीवर सही तरीके से काम नहीं करता है। यह प्रोटोजोया द्वारा कार्बोहाइड्रेट चयापचय में गड़बड़ी होने के कारण ग्लूकोज के स्तर में अत्यधिक कमी होती है जो एड्रिनल ग्रंथि, अग्न्याशय और थायरॉयड ग्रंथि की खराबी के लिए जिम्मेदार है। प्रोटीन चयापचय में प्रत्यावर्तन के कारण रक्त के ग्लोबुलिन के स्तर में परिवर्तन होता है।

(2) अनीमिया / रक्तहीनता :– ट्रीपैनोसोमा इवान्सी जहर या प्रोटियोलिटिक एंजाइमों को छोड़ता है जिससे जानवरों में अत्यधिक रक्तहीनता होती है और उनकी मौत हो जाती है। खून में पोटेशियम के स्तर में अत्यधिक वृद्धि होने के कारण लाल रक्त कण टूटने लगते हैं।

(3) स्नायु संबंधी विकार : बीमारी गंभीर होने पर जानवरों में तंत्रिका (नर्वस) लक्षण प्रदर्शित होते हैं।

रोग निदान / डायग्नोसिस

ट्रीपैनोसोम्स परजीवी के प्रतिजनी परिवर्तन (एंटीजेनिक वेरीयेशन) के कारण आज तक तिबरसा रोग के किसी भी टीके का विकास नहीं हो पाया है। इस प्रकार, रोग के वाहक स्थिति को परिभाषित करने के लिए नैदानिक उपाय का विकास ही मौजूदा विकल्प है जिससे रोग नियंत्रण की निगरानी में बेहतर रूप से मदद हो सकती है।

रोग का डायग्नोसिस नैदानिक लक्षणों के आधार पर किया जा सकता है लेकिन सही निदान / डायग्नोसिस के लिये रक्त स्मीयर जांच, संदिग्ध जानवरों के रक्त को प्रयोगशाला के जानवर में संरोपण द्वारा जांच, सीरो जैव रासायनिक परीक्षणों जैसे इलीजा, फ्लोरोसेंट एंटीबॉडी परीक्षण, मरक्यूरिक क्लोराइड परीक्षण और फॉर्मल जेल टेस्ट और प्रतिरक्षा परीक्षण के रूप में एंजाइम इम्मुनोएस्से प्रयोग किये जाते हैं। ऊँटों के खून में मौजूद ट्रीपैनोसोमा इवान्सी प्रोटोजोया की पहचान के लिये रक्त का गीला स्मीयर के सूक्ष्म (मायक्रोकॉपीकल) परीक्षण सबसे पुरानी विधि है। लेकिन रोग के निदान के लिए रक्त या लिम्फ नोड सामग्री की सूक्ष्म परीक्षण के ये तरीके अत्यधिक संवेदनशील नहीं हैं। चूहों में संदिग्ध रक्त के इंजेक्शन लगाने / संरोपण से तीन–चार दिनों के बाद चूहों के खून में ट्रीपैनोसोमा इवान्सी प्रोटोजोया को सूक्ष्म परीक्षण द्वारा देखा जा सकता है। ऊँटों में अस्थिर पारासीटेमिया की वजह से खून के सूक्ष्म परीक्षण

को लंबे और जैविक परीक्षण (चूहों में संदिग्ध रक्त के संरोपण द्वारा जांच) में संक्रमण पता लगाने का स्तर 50–80 प्रतिशत तक कम हो जाता है। इसी तरह एंजाइम से जुड़े सीरो जैव रासायनिक परीक्षण जैसे इलीजा, फ्लोरोसेंट एंटीबॉडी परीक्षण आदि की भी सीमायें हैं। आणविक परीक्षण जैसे पीसीआर द्वारा इस बीमारी की जांच अत्यधिक संवेदनशील और कारगर साबित हुई है। पीसीआर द्वारा इस बीमारी की जाँच को स्वर्ण मानक के रूप में स्थापित किया गया है लेकिन यह जाँच काफी खर्चीली है और इसमें ज्यादा समय लगता है।

रोग उपचार : ट्रीपैनोसोम्स परजीवी द्वारा परिवर्तनशील सतह ग्लाइकोप्रोटीन (VSG) की अभिव्यक्ति कर प्रतिजनी भिन्नता प्रदर्शित करना, इस रोग के खिलाफ टीका विकसित करने की कोशिश की विफलता का कारण है। आज तक ट्रीपैनोसोम्स के किसी भी टीके का विकास नहीं होने के कारण ट्रिपैनोसोमियासिस का नियंत्रण अभी भी उपलब्ध दवाइयों द्वारा इलाज और रसायन रोग निरोध पर निर्भर करता है। हालांकि, कीमोथेरेपी और रसायनरोगनिरोध की वर्तमान रणनीति की भी सीमाएँ हैं जैसे कम दवाओं की उपलब्धता, उपलब्ध ट्रीपैनोसोम्स की दवाओं के खिलाफ प्रतिरोध विकसित होना और दवाओं की विषाक्तता इत्यादि। ऊँटों में तिबरसा रोग के उपचार के लिए आमतौर पर निम्नलिखित दवाओं का इस्तेमाल किया जाता है:

(क) क्यूनापारामीन– यह दवा दो रूपों में उपलब्ध है :–

1. क्यूनापारामीन क्लोराइड – यह दवा खून में धीरे–धीरे रिलीज होती है और रसायन रोग निरोध के रूप में कार्य करता है। 2. क्यूनापारामीन डायलमीथाइसलफेट– यह दवा इंजेक्शन के बाद रक्त में जल्दी ही उपचार के स्तर तक पहुँच जाता है और चिकित्सकीय दवा के रूप में इस्तेमाल होती है। इसका उपयोग 3–5 मिलीग्राम/किग्रा शरीर भार के अनुसार त्वचा में इंजेक्शन के रूप में किया जाता है।

क्यूनापारामीन क्लोराइड और क्यूनापारामीन डायलमीथाइसलफेट दवाओं का 1:1.5 के अनुपात में संयोजन प्रोसाल्ट के रूप में कार्य करता है। इसका उपयोग 5 मिलीग्राम/किग्रा शरीर भार के अनुसार त्वचा में इंजेक्शन के रूप में किया जाता है। (ख) सुरामीन (नागानोल, मोरानील)–इस दवा का इस्तेमाल तिबरसा रोग के उपचार के लिये 0.4–0.6 ग्राम/45 किग्रा शरीर भार के अनुसार नसों में इंजेक्शन के रूप में किया जाता है।

(ग) आइसोमेटामीडियम क्लोराइड हायडरोक्लोरेट – तिबरसा रोग के उपचार के लिए इस दवा का उपयोग अन्य प्रभावी दवाओं की अनुपलब्धता होने पर करनी चाहिए। इस दवा की विषाक्ता अधिक होने के कारण इसका अधिक इस्तेमाल पशुओं के शरीर के लिए हानिकारक होता है। रोग उपचार के लिये इसका उपयोग 0.5–1 मिलीग्राम/किग्रा शरीर भार के अनुसार नसों में या मांस में इंजेक्शन के रूप में किया जाता है।

रोग नियंत्रण–

ऊँटों में तिबरसा रोग के नियंत्रण के लिये मुख्यतः तीन तरह के दृष्टिकोण की आवश्यकता है:

(क) बीमार पशुओं में रोग नियंत्रण: प्रभावित पशुओं में जल्दी से रोग निदान के बाद कारगर दवा का उपयोग कर उपचार करने से इलाज में प्रभावी मदद मिल सकती है।

(ख) जानवरों को रोग के जोखिम होने पर रसायनरोगनिरोध करना: बीमारी होने वाले स्थानिक क्षेत्रों में भारी वर्षा या अन्य कारणों से मक्खी की जनसंख्या में अत्यधिक वृद्धि होती है। ऐसे स्थानों पर पशुओं में मानसून के मौसम की शुरुआत में रसायन रोग निरोधी दवा दिया जाना चाहिए। रोग निरोधी के रूप में क्यूनापारामीन डायलमीथाइसलफेट (पानी में घुलनशील) और क्यूनापारामीन क्लोराइड (पानी में अघुलनशील) का 16.7 प्रतिशत जलीय घोल का इस्तेमाल किया जाना चाहिए।

(ग) मक्खियों का नियंत्रण : रोग के फैलाव में मक्खियों की विभिन्न जातियों जैसे टेबनस, स्टोमोक्सीस, लीपेरोसिया, हीमेटोपोटा और हीप्पोबोसका आदि की सहायक भूमिका होने के कारण इसका नियंत्रण अत्यन्त आवश्यक है। इन रोग फैलाने वाली मक्खियों का नियंत्रण भौतिक और रासायनिक तरीके से किया जा सकता है। **1. भौतिक नियंत्रण** – पशुओं के शेड से गोबर, नम बिस्तर आदि को नियमित रूप से हटाना चाहिए। तेज धूप के दौरान जानवरों को नहीं छोड़ना चाहिए क्योंकि तेज धूप जानवरों को

टेबनस और स्टोमोक्सीस जैसी मक्खियों को काटने के लिए सहायक होती है। खाइयों/जल निकायों आदि में उपजी झाड़ियों को साफ करना चाहिए इससे मक्खियों के प्रजनन को कम करने में मदद मिलती है। 2. रासायनिक नियंत्रण– मक्खियों की संख्या बढ़ने के मौसम में जानवरों और आस–पास के स्थानों पर कीटनाशक दवाओं का छिड़काव करना चाहिए। स्थिर पानी के ऊपरी सतह पर मिट्टी के तेल का छिड़काव करने से टेबनस आदि मक्खियों को मारने में मदद मिलती है।

तिबरसा रोग से पीड़ित ऊँट

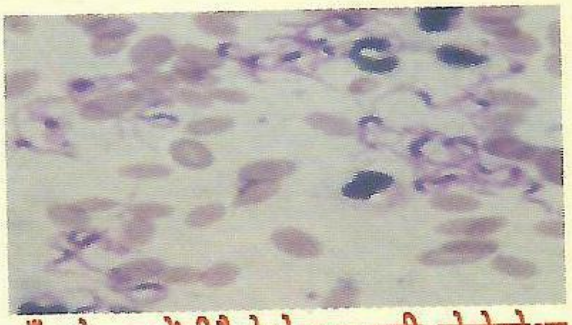

ऊँट के खून में ट्रीपैनोसोमा इवान्सी प्रोटोजोआ

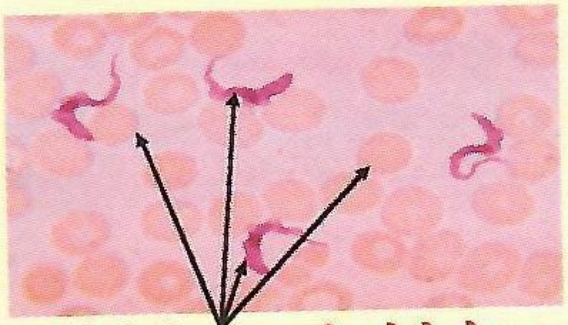

ट्रीपैनोसोमा इवान्सी प्रोटोजोआ

ऊँट में तिबरसा रोग फैलाने वाली मक्खी

–: प्रकाशक :–

निदेशक, भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

–: लेखक :–

संजय कुमार, एस.के. घोरूई एवं एन.वी. पाटिल

भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र

जोड़बीड़, शिवबाड़ी, बीकानेर 334001 (राजस्थान)

दूरभाष : 0151–2230183, फैक्स : 0151–2970153